ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.21, No2, April – June, 2026/311

ग्रामीण दलित महिलाओं की शिक्षा व्यवस्था और उसमें परिवर्तन

सौम्या यादव एवं सूर्यभान रावत

https://doi.org/ 10.61410/had.v21i2.307

सारांशः

भारत में शिक्षा का प्रवाह एवं विकास चार रूपों में हुआ है; प्रथम– जातीय क्रम में अर्थात उच्च जातियों से निम्न जातियों की ओर, द्वितीय–वर्ग क्रम में अर्थात उच्च आय वर्ग से निम्न आय वर्ग की ओर तृतीय– लैंगिक क्रम में अर्थात पुरुष वर्ग से महिला वर्ग की ओर और चतुर्थ– स्थान क्रम में अर्थात नगरीय क्षेत्र से ग्रामीण क्षेत्र की ओर। इस दृष्टिकोण से ग्रामीण दलित महिलाओं में शिक्षा का स्वरूप परम्परागत रूप में अत्यन्त नकारात्मक रहा है। प्राचीन काल में उन्हें जाति, लिंग और वर्ग के आधार पर शिक्षा से वंचित रखा गया। पित्तृसत्तात्मक व्यवस्था, निर्धनता एवं तत्समय की शैक्षिक आधारभूत संरचनाओं, संसाधनों एवं सुविधाओं की कमियों ने ग्रामीण दलित महिलाओं को केवल घरेलू, कृषि तथा अन्य अनार्थिक, अलाभकारी, श्रममूलक कार्यों से सम्बद्ध रखा। स्वतन्त्रता पश्चात् संवैधानिक, प्रशासनिक एवं विभिन्न सामाजिक संगठनों द्वारा एक तरफ ग्रामीण क्षेत्र में शैक्षिक सुविधाओं का विकास किया गया तो दूसरी ओर उनमें शिक्षा के प्रति सकारात्मक चेतना को भी विकसित किया गया। सम्प्रति ग्रामीण दलित महिलाओं की शैक्षिक चेतना में निरन्तर परिवर्तन हो रहा है और वे विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक, प्रौद्योगिक तथा प्रशासनिक क्षेत्रों में शैक्षिक आधार पर संलग्न हैं।

कुंजी शब्द : ग्रामीण, दलित, महिला, शिक्षा, परिवर्तन

केवल ज्ञान प्राप्ति के लिए ही साधन न मानकर, आधुनिक विकासशील समाज में, शिक्षा को समाज एवं व्यक्ति दोनों की आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति का महत्त्वपूर्ण आधार माना जाता है। पारिक तथा त्रिवेदी (फैक्टर एनालाइसिस ऑफ सोशियो–इकोनामिक स्टैट्स ऑफ फारमर्स इन इण्डिया, 1965), कुप्पुस्वामी तथा श्रीनिवास (एन एनालाइसिस ऑफ सम वैरियेबुल्स इनवाल्वड इन द सोशियो–इकोनामिक स्टैटस, 1960), कुप्पुस्वामी (सोशियो–इकोनामिक स्टैटस स्केल, 1962) इत्यादि समाजविदों ने इसे पद और प्रतिष्ठा का आधार स्वीकार किया है। यह सत्य भी है कि विकासशील देशों में औपचारिक शिक्षा को उच्च प्रस्थिति का मानक माना जाता है जबकि अविकसित देशों में उच्च शिक्षा पर अभिजात वर्गों का ही एकाधिकार रहा है। जब शिक्षा तकनीकी एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण से सम्बद्ध हो जाती है तो वह व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रगति एवं सामाजिक–आर्थिक विकास का आधार बन जाती है। शिक्षा उच्च आय वाले व्यक्तियों को प्रतिष्ठात्मक एवं अधिक आय अर्जित करने वाले व्यवसायों में प्रवेश का मूल स्रोत है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति विशेषज्ञ, राजनीतिज्ञ, वैज्ञानिक, डॉक्टर, इन्जिनियर, व्यवसाय प्रबन्धन विशेषज्ञ, कला, गीत–संगीत, प्रशासनिक क्षेत्र तथा कार्यालयीन एवं सचिवालयीन रोजगारपरक कार्यों से जुड़कर सत्तात्मक आधार एवं सुविधाएं प्राप्त कर सकता है।

- **शोध छात्रा – समाजशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय (स्वायत्तशासी) बहराइच**
- **अध्यक्ष – समाजशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय (स्वायत्तशासी) बहराइच**

मुख्यतः शिक्षा के तीन शाश्वत् उद्देश्य माने गये हैं :

(1) मनुष्य का स्वयं को और विश्व को जानने का प्रयास करते रहना तथा अपने को प्रभावशाली ढंग से शिक्षा जगत से जोड़ना।

(2) भूत एवं भविष्य के मध्य सेतु का निर्माण, जिससे अतीत के संकलित अनुभव एवं परिणामों को आने वाली पीढ़ी में हस्तान्तरण कर सांस्कृतिक विरासत को आगे बढ़ाना और सुन्दर भविष्य का निर्माण करना।

(3) मानव विकास की प्रक्रिया को तेज करना जिसके फलस्वरूप मनुष्य में अतिरिक्त व्यक्तिगत गुणों का आन्तरीकरण, समाज और व्यक्ति दोनों का विकास, शान्ति एवं पारस्परिक सौहार्द्र एवं समन्वय पैदा कर वैश्विक स्तर पर उत्तम जीवन शैली का निर्माण करना।

समाज में व्यक्ति की तकनीकी, प्रशासनिक तथा व्यावसायिक कुशलता में प्रकार्यात्मक भूमिका निष्पादन के साथ–साथ शिक्षा व्यावसायिक सामाजिक गतिशीलता में भी वृद्धि करती है (गोयल; 1972, सेन्टर्स; 1940, हारबिन्सन तथा चार्ल्स; 1961, मेयर्स; 1964, शोरे; 1968, सिंह; 1993, यादव; 1994 बैंक; 1954)। मुमताज अली खां (शिड्यूल्ड कास्ट्स एण्ड देयर स्टैटस इन इण्डिया, 1980) का मानना है कि प्रभावशाली सामाजिक–राजनैतिक सहभागिता एवं भूमिका अदा करने के लिए शिक्षा महत्त्वपूर्ण आधार है। साथ ही शिक्षा समाज में उन व्यक्तियों को, जो विभिन्न अभिजात वर्गीय प्रस्थिति से जुड़े नहीं है, प्रभावशाली तथा उच्च प्रस्थिति प्राप्त विभिन्न अभिजनों की भूमिकाओं को एवं अपने आस–पास होने वाली विभिन्न घटनाओं को समझने एवं विवेकपूर्ण निर्णय लेने में सहायता करती है।

प्राचीन भारत में शिक्षा का अधिकार केवल कुछ ही अभिजात वर्ग के पुरूषों को ही था। स्त्रियां शिक्षा से पूर्णतया वंचित थीं। इस कारण समाज का बहुत बड़ा भाग अनेक प्रकार की सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक निर्योग्यताओं, असमानताओं, उच्चता एवं निम्नता की भावनाओं, शोषणपूर्ण व्यवस्थाओं, शारीरिक प्रताड़नाओं एवं मानवता विहीन व्यवस्थाओं का शिकार था। इस परिवेश में दलितों और उनमें भी दलित महिलाओं की दशा और भी शोचनीय थी। भारतीय शिक्षा व्यवस्था की प्राचीन परम्पराओं के अन्तर्गत इन्हें मौखिक अथवा लिखित ज्ञान, प्रवेश तथा साथ–साथ उठने–बैठने पर पूर्ण निषेध था। यद्यपि इस विषमतामूलक विभाजनों तथा निषेधों के कारण भारत को प्रगति एवं विकास के सन्दर्भ में पीछे जाना पड़ा फिर भी तत्कालीन भारत के उच्चवर्गीय लोग इसी व्यवस्था को ठीक समझते थे। जब हम महिला शिक्षा के प्रश्न पर समाजवैज्ञानिक दृष्टिपात करते हैं तो स्पष्ट होता है कि इस दिशा में सुदृढ़ प्रयोग करने का श्रेय सावित्री बाई फुले को जाता है। इससे पूर्व महिलाएं आध्यात्मिक एवं धार्मिक स्तर पर ज्ञान प्राप्त करने हेतु व्यक्तिगत एवं सुनिश्चित सामुदायिक प्रयास करती थीं। महिलाओं के लिए शिक्षा का सामान्यीकरण एवं अवसर ही नहीं था, अपितु इस सम्बन्ध में भारतीय समाज सदैव कठोर रहा है। सबके लिए शिक्षा का अधिकार न होने एवं जातिगत प्रतिबन्धों के दोहरे बन्धनों में महिलाएं पूर्णरूपेण जकड़ी थीं। सावित्रीबाई फुले ने महिलाओं की शिक्षा को सामाजिक न्याय से सम्बद्ध किया जिसके फलस्वरूप दलित महिलाओं में भी शैक्षिक चेतना जागृत हुई।

भारतीय सामाजिक संगठन में स्वतन्त्रता पूर्व दलित, कमजोर एवं निर्धन, पुरूष एवं महिलाओं को न तो शिक्षा के अधिकार थे और न ही सुविधाएं। इस कारण समाज का निम्नवर्ग सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं प्रौद्योगिक रूप में अत्यन्त निरीह, सम्मान रहित, दबा–कुचला तथा

ज्ञान एवं अधिकार विहीन था। स्वतन्त्रता पश्चात् भारतीय संवैधानिक व्यवस्था में शिक्षा का अधिकार एवं सुविधा मिलने के पश्चात निम्नवर्गों, दलितों एवं पिछड़े वर्गों में शैक्षिक चेतना का प्रसार हुआ परिणाम स्वरूप भारत में नवीन मध्य वर्ग का उदय हुआ। नये सरकारी एवं निजी, परम्परागत, प्रौद्योगिकीय, चिकित्सकीय तथा प्रशिक्षणात्मक विद्यालयों की स्थापना ने देश के सामाजिक–आर्थिक विकास को नई दिशा एवं गति प्रदान किया। महिलाओं एवं पुरूषों का सामाजिक, आर्थिक–राजनैतिक सशक्तिकरण होना प्रारम्भ हुआ परन्तु विगत कई दशकों की नवीन शिक्षा प्रणाली ने दलित, शोषित एवं पिछड़े वर्ग के लोगों के विकास में स्थिरता ला दिया है।

वास्तव में स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय राजनीतिज्ञों, विद्वानों एवं चिन्तकों ने माना कि अगर देश का सम्यक एवं सर्वांगीण विकास करना है तो शिक्षा को समान रूप से सभी के लिए अनिवार्य एवं आवश्यक करना होगा क्योंकि इसी से ही न्यायपूर्ण समतावादी समाज की संरचना निर्मित हो सकेगी। विशेषकर देश की महिलाओं, अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं दुर्बल तथा दलित वर्गों का उत्थान भी समग्र एवं निरपेक्षवादी शिक्षा से ही सम्भव होगा। भारतीय संविधान में इन सभी लोगों के विकास और हितों की सुरक्षा के लिए अनेक प्राविधानों, शैक्षणिक योजनाओं, सुविधाओं, समानताओं, अवसरों जैसे–विद्यालयों का निर्माण, सबके लिए शिक्षा एवं प्रवेश, शुल्क की सुविधा, आरक्षण, छात्रवृत्ति, बुकबैंक, छात्रावास का निर्माण एवं इन्हें प्रोत्साहन हेतु भोजन, परिधान एवं पुस्तकीय सहायता इत्यादि, की विशेष व्यवस्थाएं की गईं।

रिपोर्ट ऑफ द कमिश्नर फार शेड्यूल्ड कास्ट एण्ड शेड्यूल्ड ट्राइब्स; 1962–63, रिपोर्ट ऑफ द इजूकेशन कमीशन; 1964–66, संसद सदस्यों की गठित कमेटी की रिपोर्ट; 1967 तथा लेनवाय; (1971), स्टेफेल; (1951), अलेक्जेन्डर; (1968), गोस्वामी; (1969) के अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि समाज के दलित एवं कमजोर वर्गों के समावेशी विकास और संविधान के अन्तर्गत वर्णित सुरक्षात्मक प्रावधानों के लाभों को पाने हेतु इन्हें शिक्षा की महती आवश्यकता है, क्योंकि दलितों को समानता, सामाजिक न्याय सशक्तिकरण एवं प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए आधुनिक एवं औपचारिक शिक्षा के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं है। सामाजिक दूरी, विषमता, भिन्नता तथा द्वेषपूर्ण भावना की समाप्ति केवल उच्च शिक्षा से ही सम्भव है। डॉ. तिवारी (भारत में महिला शिक्षा एवं पर्यावरण विकास पर प्रभाव, 1999) ने महिला शिक्षा को पर्यावरण से भी सम्बद्ध किया है। दलितों की शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न अध्ययनों देसाई; आई0सी0एस0एस0आर0 द्वारा प्रायोजित, (1974), चिटनीस; (1972), डिसूजा; (1977), झा; (1973), शाह; (1973), सिन्हा; (1975), अहमद; (1974) से यह निष्कर्ष निकलता है कि ग्रामीण दलित छात्रों में उच्च शिक्षा के प्रति प्रायः उदासीनता पाई जाती है, और यह प्रवृत्ति असमानता में वृद्धि तथा सामाजिक एवं व्यावसायिक गतिशीलता में ऋणात्मकता उत्पन्न करती है। दलित महिलाओं की प्रारम्भ में शिक्षा के प्रति नकारात्मक उन्मुखता ने भेदभाव, अस्पृश्यात्मक स्थिति तथा असमानता को स्थिर रखने में सकारात्मक भूमिका निभाई है। इसके साथ ही राघवेन्द्र; (2001), मिश्रा; (2003), गौतम; (2004), विश्वकर्मा; (2005) के अध्ययनों ने भी दलित महिलाओं में शिक्षा के विकास का अत्याचार, शोषण एवं उत्पीड़न निवारण तथा प्रगति के लिए महत्त्वपूर्ण आधार माना है।

भारतीय ग्रामीण समाज में शिक्षा के प्रसार, प्रभाव, चेतना और व्यावहारिक स्तर पर शैक्षिक गतिशीलता, डिजिटल शिक्षा के प्रति उन्मुखता सम्बन्धी अनेक अध्ययन समाजशास्त्रियों एवं शिक्षाशास्त्रियों तथा भारत सरकार द्वारा किए गये हैं। इनमें शर्मा (2013), मिश्रा (2016), पाण्डेय (2018),

त्रिपाठी (2022), मिश्रा (2020), पाण्डेय (2021), सिंह (2019), कटियार (2017), पाण्डेय (2018), अग्रवाल (2019), यादव (2022) इत्यादि के अध्ययन प्रमुख हैं। ये सभी अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि ग्रामीण समाज में युवाओं और उनके संरक्षकों में शिक्षा के प्रति चेतना सकारात्मक रूप में विकसित हुई हैं और नई पीढ़ी शिक्षा प्राप्त करने हेतु सतत् प्रयत्नशील है, परन्तु वर्तमान में धीरे–धीरे परम्परागत शिक्षा के प्रति उन्मुखता में कमी एवं व्यावसायिक तथा रोजगारपरक शिक्षा की ओर उन्मुखता में वृद्धि हो रही है। गांव के निकट छोटे कस्बों एवं बाजारों में कोचिंग के साथ–साथ व्यवसाय एवं रोजगार हेतु छोटे–छोटे पुस्तकालय (लाइब्रेरी), डिजिटल लाइब्रेरी केन्द्र स्थापित हो गये हैं। इन सुविधाओं के पश्चात् भी दलित वर्ग में कुछ उनकी परिस्थितिजन्य एवं स्वभावगत कमियां हैं जिसने ग्रामीण दलित महिलाओं में शिक्षा की स्थिति को नकारात्मक रूप में प्रभावित किया है। दलित परिवार भौतिक सुविधाओं की प्राप्ति हेतु बच्चों को ऐसी शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश दिलाते हैं, जहां उन्हें जाना न पड़े, वे छात्रवृत्ति प्राप्त करें तथा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हों। कभी–कभी सरकार की तथाकथित नीतियां भी इस तरह की बनती हैं कि दलित संवर्ग के बच्चे गुणवत्तापरक शिक्षा न प्राप्त कर सकें और वे केवल कारपोरेट सेक्टर तथा निर्माण कार्य में श्रमिक के रूप में अपनी सेवाएं दे सकें। इसके साथ ही सम्प्रति शिक्षा की आनलाइन व्यवस्था ने भी छात्रों में अनुशासन, व्यक्तित्व निर्माण, नैतिकता, व्यापक ज्ञान एवं पारिवारिक तथा सामाजिक सामंजस्य को नकारात्मक रूप में प्रभावित किया है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि ग्रामीण दलित एवं पिछड़े वर्गों के परिवार में बालक–बालिकाओं की कमजोर तथा प्रभावहीन शिक्षा की पृष्ठभूमि में सरकार एवं नीति–निर्माताओं का ही नहीं अपितु उनके परिवार का भी नकारात्मक योगदान है।

दलित वर्ग में शैक्षणिक प्रक्रिया के माध्यम से आधुनिकीकरण की परिधि में लाने की निरन्तर चेष्टायें की गयी हैं, परन्तु सामाजिक–आर्थिक असमानताएं, जातीय पूर्वाग्रह, सनातनी रूढ़ियां इत्यादि कुछ ऐसे तत्व हैं जो इन्हें शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ने से रोकती रही हैं। बोस (इजुकेशनल डेवलपमेंट एमंग द शिड्यूल्ड कास्ट, 1970), अग्रवाल (कास्ट, रेलिजन एण्ड पावर, 1971), चौहान (सोशल प्राब्लम्स ऑफ द इजुकेशन ऑफ द शिड्यूल कास्ट्स, 1967), श्रीकान्त (इजुकेशन ऑफ द बैकवर्ड क्लासेज, 1964), गोयल (द स्टडी ऑफ शिड्यूल्ड कास्ट स्टूडेन्ट्स ऑफ कॉलेजेज इन ईस्टर्न यू0पी0, 1973–74) इत्यादि अध्ययनों में भी दलित वर्ग की शैक्षिक स्थिति का वैज्ञानिक विवेचन किया गया है। इन सभी अध्ययनों से जो सामान्य निष्कर्ष प्राप्त हुए है, उन्हें निम्नांकित बिन्दुओं में वर्गीकृत कर सकते हैं।

1- केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा दलित वर्ग में शिक्षा के विकास हेतु बनाई गई विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों एवं सुविधाओं के परिणामस्वरूप इनमें शिक्षा का तीव्र गति से प्रसार हुआ है।

2- आर्थिक एवं संख्यात्मक दृष्टि से सुदृढ़ दलित जातियां सरकारी प्रयासों से सर्वाधिक लाभान्वित हुई हैं, जिससे दलितों में भी एक अलग शैक्षिक अभिजात वर्ग का उदय हुआ है।

3- प्रतिष्ठित एवं बड़े उच्च शिक्षण संस्थानों में प्रभु जातियों का वर्चस्व होने के कारण दलित छात्र–छात्राओं को सामाजिक अन्तर्कियात्मक अन्तर्सम्बन्ध बनाने एवं सामाजिक सामजन्स्य स्थापित करने में वर्तमान में भी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।

4- वर्तमान परिदृश्य में दलित जाति के विद्यार्थियों को आर्थिक पिछड़ेपन के कारण उनके संरक्षक कम आयु में ही जीविकोपार्जन के विभिन्न व्यवसायों में संलग्न कर देते हैं, इसलिए वे उच्च

शिक्षा नहीं प्राप्त कर पाते और परिणाम स्वरूप उच्च प्रतिष्ठापरक पदों पर आरक्षण के अनुरूप भी आसीन नहीं हो पाते हैं तथा विभिन्न सरकारी सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं।

5- अनुभवाश्रित अवलोकनों से स्पष्ट होता रहा है कि धीरे–धीरे शिक्षण संस्थाओं में दलित छात्र–छात्राओं की संख्या में कमी आ रही है। सरकार ने भी इस सम्बन्ध में गम्भीरता पूर्वक विचार करना प्रारम्भ कर दिया है और छात्र संख्या में वृद्धि के लिए विभिन्न प्रयासों को जारी रखने हेतु निर्देशित किया है।

6- परम्परागत शिक्षा की तरफ दलित छात्राओं की उन्मुखता में ऋणात्मक परिवर्तन हो रहा है तथा लघु व्यावसायिक पाठ्यक्रमों एवं छोटे–छोटे रोजगार सम्बन्धी प्रशिक्षण कार्यक्रमों की ओर धनात्मक उन्मुखता प्रतीत हो रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- Agarwal, Bina : A Field of One's Own : Gender and Land Rights in South Asia, Cambridge University Press, 2019.
- Agrawal, P.C. : Caste, Religion and Power, Shriram Centre for Industrial Relations, New Delhi, 1971.
- Alexander, K.C. : "Changing Status of Pulays Harijans of Kerala", Economic and Political weekly, Vol. 111, No. 26-28 July 1968.
- Chauhan, Brijraj : Special Problems of the education of the Scheduled Castes", Sociology of Education in India. in M.S. Gore, 1.P. Desai and S. Chitnis (ed.), NCERT, Delhi, 1967.
- Chitnis : The Educational Problems of Scheduled Castes and Tribes, College Students In Maharashtra, I.C.S.S.R., New Delhi, 1974.
- D'Souza, Victor :Changing Status of Scheduled Castes", The Economic Weekly, Vol. XVI, No. 48, Dec. 1, 1962.
- Gautam, S.S. : Dalit Mahila- Dasha aur Disha, Siddharth Books, New Delhi, 2004.
- Goswami, R. : School Teachers as a Determinant of Educability in India": A Sociological Study in M.P. Ruhela (ed.) Determinants of untouchability in India, Jain Brothers, New Delhi, 1969.
- Goyal, S.K., The Study of Scheduled Caste Students of College ed by Indian Council of Social Science Research, New Delhi 1973-74, Deptt. of Sociology Varanasi. Banaras Hindu University, Gusfield, J.R., Tradition and Modernity: Misplaced Polaritie in the Study of Social Change, American Journal of Sociology, Vol. 12, No. 4, Jan. 1967.
- Harbinson and Myers, Charles A. : Education Manpower and Economic Growth Strategies of Human Resources Development, Mac Graw-Hill, New York, 1964.
- Katiyar, S.P. : Gender Disparity in Literacy in India, J.N.U. New Delhi, 2017.
- Khan, Mumtaz Ali : Scheduled Castes and their status in India Publishing House, New Delhi, 1980.

- Kuppuswami, A Study of Opinion Regarding Marriage and Divorce, Asia Publishing House, Bombay, 1957.
- Mishra, S.N. : Women's Education and Development , Gyan Publishing House New Delhi, 2016.
- Pandey, P.N. : Education and Social Mobility : A Text with Reference to Scheduled Caste, Daya Publishing House, New Delhi, 2018.
- Pareek, Udai and Trivedi, C. : Factor Analysis of Socio-Economic Status of Farmers in India, Rural Sociology, 1965.
- Raghvendra : Gramin Dalit Mahilaon ki Shiksha ; Classic Publishing House Jaipur, 2001.
- Schorr, A.L. : Slums and Social Insecurity, Nelson, London, 1964.
- Shah : Education and Dalit Identity ,Sage Publication, 2005.
- Sharma, Sunita : Dalit Women : From Exclusion to Integration, Rawat Publications Jaipur, 2013.
- Singh, Bishwambhar: Gramin Samaaj mein Anusuchit Jatiyon ki Samajik Arthik Dashayein, Unpublished Thesis ,Sociology Dept. BHU., 1993.
- Srikant, L.M. : Education of the Backward Classes The Indian Year Book of Education, NCERT, New Delhi, 1964.
- Vishwakarma, Bharti : Dalit Mahila Sashaktikaran aur Shiksha, Classic Publishing House, Jaipur, 2005.
- Yadav, Jairam: Anusuchit Jatiyon ki Dashayein, Unpublished Thesis , Sociology Dept.,1994.

सौम्या यादव, email: yadavsaumya27@gmail.com
प्रो0 सूर्यभान रावत , email: sbrawat123@gmail.com